ॐ नमः श्री राम लाल प्रभु जी परब्रह्मणे नमः

श्री योग महादिव्य रामायण

सातवां खण्ड (विचार काण्ड) परिशिष्ट

कैवल्य विचार

योगदर्शन के चतुर्थ पाद के
12 से 34 सूत्रों की व्याख्या

लेखक :-
चमन लाल कपूर 'सेवक'

प्रकाशक :-
योग साधन आश्रम, 3 - एल माडल टाऊन,
होशियारपुर (पंजाब)

ॐ नमः श्री राम लाल प्रभु जी परब्रह्मणे नमः

श्री योग महादिव्य रामायण

सातवां खण्ड (विचार काण्ड परिशिष्ट)

योगदर्शन के चतुर्थ पाद के
१२ से ३४ सूत्रों की व्याख्या

कैवल्य विचार

लेखक :-
चमन लाल कपूर 'सेवक'

प्रकाशक :-
योग साधन आश्रम, 3 - एल, माडल टाऊन,
होशियारपुर (पंजाब)

प्रथम बार 2000
योगेश्वर राम लालाब्द 119
विक्रम संवत् 2064
व्यास पूजा जुलाई, 2007

भेंट:- रु. 20/-

योग वन्दना

❖ योग – विद्यां नमाम्यहम् ❖

सौंदर्य लहरीरूपां, तापत्रयविनाशनीम् ।
तेजस्विनीं तपोरूपां, योगविद्यां नमाम्यहम् ।।१।।

संस्थापकां समत्वं तां, शक्तिसृजनकारिणीम् ।
चित्तवृत्तिनिरोधाय, योगविद्यां नमाम्यहम् ।।२।।

अर्धनारीश्वरस्येमां, चैतन्यसार संभवाम् ।
पूर्णरूपकुण्डलिनीं, योगविद्यां नमाम्यहम् ।।३।।

– चमन लाल कपूर "सेवक"

●●●●

समर्पण

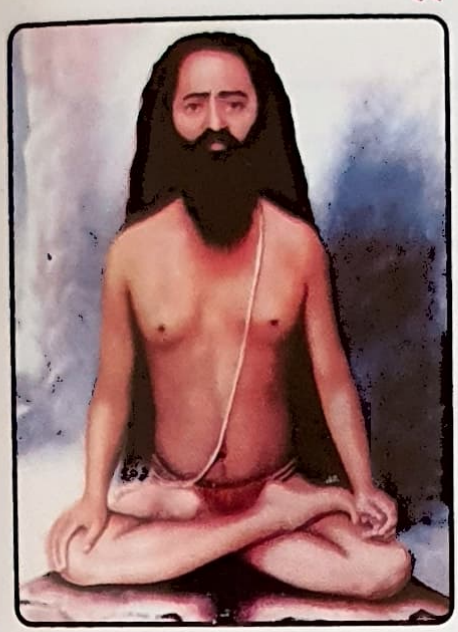

श्री प्रभु राम लाल जी महाराज

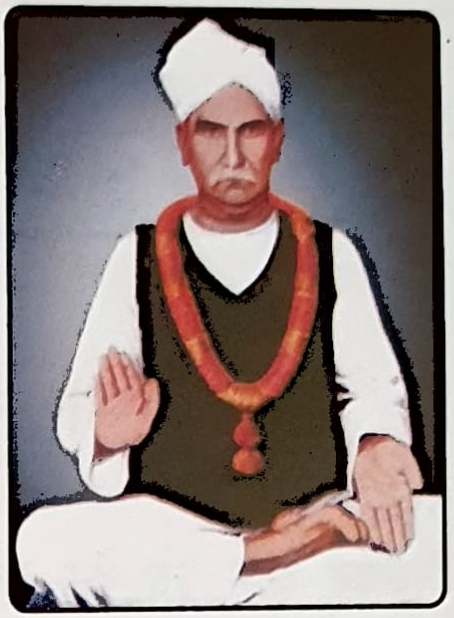

श्री स्वामी मुलखराज जी महाराज

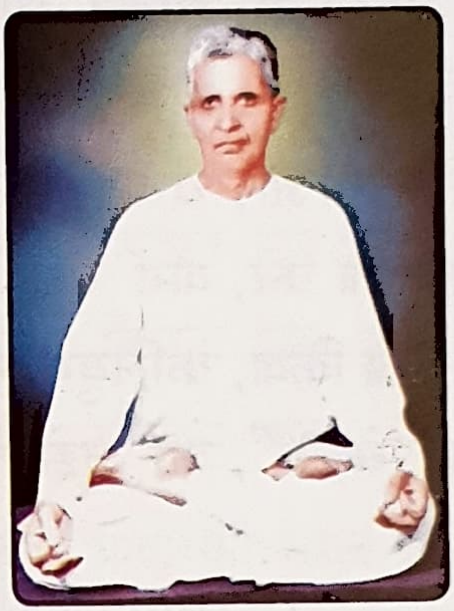

सद्गुरुदेव श्री चमन लाल कपूर जी

समर्पित उन के चरणों में, जिन की है यह जीवन गाथा।
राम मुलख भगवान की चरणि, टेकत सेवक 'चमन' है माथा।।

योग वन्दना

❖ योग तुझे नमस्कार ❖

सुन्दर करे जो देह को, करे दुःखों से पार ।
तेज रूप तप रूप जो, योग तुझे नमस्कार ।।१।।
करे समत्व दान जो, शक्ति सिरजनहार ।
चित्तवृत्ति निरोधहित, योग तुझे नमस्कार ।।२।।
आदिनाथ से ऊपजा, चेतनता का सार ।
जागृत कुण्डली जो करे, योग तुझे नमस्कार ।।३।।
राम लाल जिस का किया, कलियुग में उद्धार ।
मुलखराज के "सेवक", का तुझे नमस्कार ।।४।।

– चमन लाल कपूर "सेवक"

●●●●

प्रस्तावना

कैवल्य (मोक्ष) विचार, जो सहृदय पाठकों की सेवा में प्रस्तुत है, कोई स्वतंत्र पुस्तक नहीं। यह लेख "श्री योग महादिव्य रामायण (सप्तम खण्ड) (विचार काण्ड)" का परिशिष्ट है।

श्री योग महादिव्य रामायण का विचार काण्ड महर्षि पतंजलि द्वारा रचित 'योग दर्शन' की सरल व्याख्या है। योग दर्शन चार पादों में महर्षि पतंजलि ने लिखा है जो इस प्रकार से है:-

प्रथम पाद- समाधि पाद
द्वितीय पाद - साधन पाद
तृतीय पाद - विभूति पाद और
चतुर्थ पाद - कैवल्य पाद।

उपरोक्त चारों पादों की सरल व्याख्या 'विचार काण्ड' में कुछ वर्ष पूर्व मुद्रित हुई थी। परंतु प्रमाद वश चतुर्थ पाद के ३४ सूत्रों में से केवल ११ सूत्रों

की व्याख्या ही 'विचार काण्ड' में दी जा सकी। उस भूल को सुधारने के लिए प्रस्तुत परिशिष्ट लेख महानुभावी पाठकों के समक्ष प्रस्तुत कर रहे हैं। इस परिशिष्ट में चतुर्थ पाद के १२ से ३४ सूत्रों की व्याख्या का प्रयास किया गया है। इस लेख का विषय है कि योगी किस प्रकार 'चित्त' को आत्मा में लीन कर कैवल्य (मोक्ष) को प्राप्त करता है अथवा किस प्रकार बिन्दु सागर में गिर कर अपना अस्तित्व खो देता है।

आशा है विद्वज्जन 'सेवक' के इस प्रयास को भी स्वीकार करेंगे।

होशियारपुर **-चमन लाल कपूर**

23-05-2007

कैवल्य विचार

विषय सूची

क्र.सं.	सूत्र	पृष्ठ
1.	हेतुफलाश्रयालम्बनैः संगृहीतत्वा-देषामभावे तदभावः। (यो०द० IV. 11)	6
2.	अतीतानागतं स्वरूपतोऽस्त्यध्वभेदाद्धर्माणाम्। (यो०द० IV. 12)	7
3.	ते व्यक्तसूक्ष्मा गुणात्मानः। (यो०द० IV. 13)	8
4.	परिणामैकत्वाद्वस्तुतत्त्वम्। (यो०द० IV. 14)	9
5.	वस्तुसाम्ये चित्तभेदात्तयोर्विभक्तः पन्थाः। (यो०द० IV. 15)	10
6.	न चैकचित्ततन्त्रं वस्तु तदप्रमाणकं तदा किं स्यात्। (यो०द० IV. 16)	11
7.	तदुपरागापेक्षित्वाच्चित्तस्य वस्तु ज्ञाताज्ञातम्। (यो०द० IV. 17)	11

क्र.सं.	सूत्र	पृष्ठ
8.	सदा ज्ञाताश्चित्तवृत्तयस्तत्प्रभोः पुरुषस्यापरिणामित्वात्। (यो०द० IV. 18)	14
9.	न तत्स्वाभासं दृश्यत्वात्। (यो०द० IV. 19)	15
10.	एकसमये चोभयानवधारणम्। (यो०द० IV. 20)	15
11.	चित्तान्तरदृश्ये बुद्धिबुद्धेरतिप्रसङ्गः स्मृतिसंकरश्च। (यो०द० IV. 21)	16
12.	चितेरप्रतिसंक्रमायास्तदाकारापत्तौ स्वबुद्धिसंवेदनम्। (यो०द० IV. 22)	16
13.	द्रष्टृदृश्योपरक्तं चित्तं सर्वार्थम्। (यो०द० IV. 23)	17
14.	तदसंख्येयवासनाभिश्चित्रमपि परार्थं संहत्यकारित्वात्। (यो०द० IV. 24)	18
15.	विशेषदर्शिन आत्मभावभावनाविनिवृत्तिः। (यो०द० IV. 25)	20
16.	तदा विवेकनिम्नं कैवल्यप्राग्भारं चित्तम्। (यो०द० IV. 26)	22

क्र.सं.	सूत्र	पृष्ठ
17.	तच्छिद्रेषु प्रत्ययान्तराणि संस्कारेभ्यः। (यो०द० IV. 27)	23
18.	हानमेषां क्लेशवदुक्तम्। (यो०द० IV. 28)	25
19.	प्रसंख्यानेऽप्यकुसीदस्य सर्वथा विवेकख्यातेर्धर्ममेघः समाधिः। (यो०द० IV. 29)	26
20.	ततः क्लेशकर्मनिवृत्तिः। (यो०द० IV. 30)	27
21.	तदा सर्वावरणमलापेतस्य ज्ञानस्यानन्त्याज्ज्ञेयमल्पम्। (यो०द० IV. 31)	27
22.	ततः कृतार्थानां परिणामक्रमसमाप्तिर्गुणानाम्। (यो०द० IV. 32)	28
23.	क्षणप्रतियोगी परिणामापरान्तनिर्ग्राह्यः क्रमः। (यो०द० IV. 33)	28
24.	पुरुषार्थशून्यानां गुणानां प्रति प्रसवः कैवल्यं स्वरूपप्रतिष्ठा वा चितिशक्तिरिति। (यो०द० IV. 34)	28

श्री दिव्य रामायण सहगान

दिव्य रामायण की गाथा को,
जो नर सुने सुनावे ।
जीवन में रहे सुखी हमेशा,
अंत परमपद पावे ।।
श्री प्रभु गंडाराम दुलारे,
इस में उन के खेल हैं न्यारे ।
पतित पावनी कथा मनोहर,
भक्तन के मन भावे ।।
सुन्दर यह इतिहास मनोहर,
लीला कीनी जिमि योगेश्वर ।
योग साधना की पावस ऋतु,
योगामृत बरसावे ।।
उत्तम नीति इस में आई,
भक्त जनों के जो मन भाई ।
इस के सुनने से प्राणी का,
पाप नाश हो जावे ।।
श्री प्रभु राम लाल हैं नायक,
जीव चराचर के सुखदायक ।
उन के चरण कमल का भौंरा,
'सेवक' शीश झुकावे ।।

ॐ

कैवल्य विचार

दोहा

लक्ष्य योग का जानिये,
'कैवल्य' मेरे मीत।
बिन्दु सागर जिमि गिरे,
वैसी ही यह रीत।। १

बिन्दु सागर जा गिरे,
हो न फिर प्रतीत।
योगी जन का लक्ष्य है,
'कैवल्य' मेरे मीत।। २

प्रभो दयामय दया कर,
चरणों की हूँ धूल।
भूलनहार इस दास की,
क्षमा करें यह भूल।। 1

'विचार काण्ड' था आप लिखाया,
'सेवक' अधूरा वह रख पाया।
यह अपराध क्षम्य नहीं नाथ,
मेरा न्याय आपके हाथ।
क्षमाशील तुम मैं क्षमार्थी,
क्षमा मांगूं मैं अल्प स्वार्थी।
आप लिखवाना अब हे नाथ,
'परिशिष्ट' प्रसंग 'सेवक' हाथ।
अल्पमति मैं हूँ गुरुदेव,
विनय यही है आपकी सेव।

शेष सूत्रों में निहित जो ज्ञान,
स्वयं लिखवाना हे भगवान।

आठ साल बाद फिर, (ई० स० 1999-2007)
मुलखराज के पास।
पुनः आया वही साध,
ले जिज्ञासा खास।। 2

आ कर उस कीन प्रणाम,
दीना अपना परिचय तमाम।
वर्षों बाद मैं नाथ हूँ आया,
था जो ज्ञान आप दे पाया।
उस से धन्य मैं हो गया नाथ,
कुछ समय रह आपके साथ।
तुमसे शिक्षा योग की पायी,
हठ योग की मैं कीन कमाई।

राज योग भी आप सिखाया,
ऋषि पतंजली जो लिख पाया।
पूछना चाहूँ कुछ मैं नाथ,
जिज्ञासा इक हूँ लाया साथ।
वृत्ति निरोध किमि हो पाये,
कैवल्य में जो बाधा लाये।
कहा नाथ तुम गये हो भूल,
बीते वर्ष न निकला शूल।
'वृत्ति' 'वासना' को उपजाये,
किमि 'कैवल्य' 'वासनिक' पाये।

वासना का प्रसंग जो,
करूं मैं वही बखान।
कल प्रातः तुम आना,
प्रभु से पाना ज्ञान।। 3

दिन दूसरा (प्रातः)

प्रातः काल जब साधु आया,
स्वामी जी ने पास बिठाया।
और कहा हे साधु भाई,
'वासना' जो कथन में आई।
उस के रूप चार बतलाऊं,
'हेतु' 'फल' व 'आश्रय' कथ पाऊं।
चौथा 'आलंबन' है मम मीत,
कर लो उसकी तुम प्रतीत।
जब तक चारों रहें सक्रिय,
'कैवल्य' असंभव मीत प्रिय।
इनका होता जभी अभाव,
वासना का तब रहत न भाव।
कहा साध हे मम गुरुदेव,
इसका भी बतलाओ भेव।

सुनूँ रहस्य की मैं यह बात,
जिस का ज्ञान न मुझको तात।

किमि अभाव इन चार का,
होता है मम नाथ।
श्रवण करूँ मैं अब यहां,
बैठ आप के साथ।। 4

कहा स्वामी हे मम साध,
सूक्ष्म है यह ज्ञान अगाध।
[1] इन का संग्रह यदि हो पाय,
इन का तब अभाव हो जाय।

---

1. हेतुफलाश्रयालम्बनैः संगृहीतत्वादेषामभावे तदभावः। (यो०द० IV. 11)
अर्थ : हेतु, फल, आश्रय और आलंबन के संगृहीत होने से इन के अभाव में वासनाओं का अभाव होता है।

हेतु =Cause, फल =Motive, आश्रय =Substratum, आलंबन =Object

परंतु संग्रह किमि हो भाई,
'चित्त' की है यही कठिनाई।
कहा साध मुझ को बतलावें,
कारण अड़चन का समझावें।
मुझ को समझ नहीं है आई,
संग्रह में है क्या कठिनाई।
कहा नाथ तुझे बतलाऊं,
सुनो ध्यान से जो समझाऊँ।
तुम जानो हे साध प्यारे,
जीवन के क्षण लांबे सारे।
[1] अतीत के थे कुछ क्षण मीत,
वर्तमान के बहुत लो चीत।

---

1. अतीतानागतं स्वरूपतोऽस्त्यध्वभेदाद्धर्माणाम्। (यो०द० IV. 12)
अर्थ : अतीत अनागत स्वरूप से रहते हैं। हेतु फल आदि धर्मों का काल से भेद होता है।

भविष्य में भी होंगे भाई,
जीवन क्षण की यह समुदाई।

जीवन के क्षण अनन्त हैं,
हर में 'हेतु' 'फल' आद।
सब का संग्रह हो किमि,
दो ध्यान तुम साध।। 5

[1] और बात भी एक है,
भूलो न वह तात।
'हेतु' आदि कुछ स्थूल हों,
सूक्ष्म कुछ साक्षात।। 6

---

1. ते व्यक्तसूक्ष्मा गुणात्मानः। (यो०द० IV. 13)
अर्थ : वे (हेतु आदि) प्रकट और सूक्ष्म गुण स्वरूप हैं।

स्थूल सूक्ष्म का मेल तो,
हो सके नहीं मीत।
फिर 'संग्रह' बन सके किमि,
यह भी राखो चीत।। 7

बात पते की और इक,
मैं बतलाऊँ साध।
एकता तो परिणाम पर,
हो सकती निर्बाध।। 8

अंत में एकता यदि हो जाये,
भेद भाव तब सब मिट पाये।
[1] परिणामी वस्तु इक हो मीत,
यह तुम समझो ला कर चीत।

---

1. परिणामैकत्वाद्वस्तुतत्त्वम्। (यो०द० IV. 14)
अर्थ : परिणाम के एक होने से वस्तु की एकता होती है।

[1] पर इस से भी न बनती बात,
चित्त की है प्रधानता तात।
जेकर चित्त दो चित्ता होय,
काम न बनता फिर भी सोय।
सन्मुख बड़ी समस्या मीत,
'कैवल्य' के मग रुकावट 'चीत'।
होय 'चित्त' भ्रमित जब भाई,
'वस्तु' का ज्ञान मिले न राई।
यह असमंजस की है बात,
इस का सुझाव क्या हो तात।

---

1. वस्तुसाम्ये चित्तभेदात्तयोर्विभक्तः पन्थाः।
(यो०द० IV. 15)
अर्थ : वस्तु के एक होने पर भी चित्त के भेद से उन दोनों (चित्त और वस्तु) का अलग-अलग मार्ग है अर्थात् वे दोनों अलग अलग हैं।

[1] वस्तु का जभी ज्ञान न होय,
कैवल्य मार्ग पाय किमि कोय।

[2] भ्रमित रहत है चित्त तब,
ज्ञाताज्ञाती मीत।
उधेड़-बुन में रहत वह,
किंकर्तव्यी चीत।। 9

---

1. न चैकचित्ततन्त्रं वस्तु तदप्रमाणकं तदा किं स्यात्।
(यो०द० IV. 16)
अर्थ : (ग्राह्य) वस्तु एक चित्त के अधीन नहीं है क्योंकि वह वस्तु बिना 'प्रमाण-चित्त' के उस समय क्या होगी (अर्थात् कुछ भी नहीं होगी)

2. तदुपरागापेक्षित्वाच्चित्तस्य वस्तु ज्ञाताज्ञातम्।
(यो०द० IV. 17)
अर्थ : चित्त को वस्तु के जानने में उस के 'उपराग' (विषय का चित्त में प्रतिबिंब पड़ना) की अपेक्षा होती है। इसलिए उस को (चित्त को) वस्तु 'ज्ञात' और 'अज्ञात' होती है।

सुन कर नाथ से बात यह,
साध कहा हे नाथ।
असमंजस का हल क्या,
है वा किस के हाथ।। 10

कहा स्वामी हे साध प्यारे,
आओ सायं जब इस द्वारे।
यही विषय हम फिर चलायें,
बात यही विचार में लायें।

दिन दूसरा (सायं)

कर विश्राम नाथ तब आये,
निज आसन पर बैठ वे पाये।
साध भी वहां पर आ पधारा,
प्रणाम कर उस वचन उचारा।

मेरे मन में घूमती बात,
कैवल्य की रीति क्या है तात।
मार्ग में तो विघ्न अनेक,
उपाय दीखत कोई न एक।
नाथ शरण मैं हूँ तव आया,
बतायें मोक्ष का सरल उपाया।
उस की सुनी जब यह जिज्ञास,
बोले नाथ ला मुख पै हास।
मोक्ष न खाला जी का द्वार,
साध कठिन यह मार्ग अपार।
फिर भी मैं वह बात बताऊँ,
पतंजल शास्त्र में जो पाऊँ।

पतंजल शास्त्र कथ रहा,
बात अकाट्य एक।
'मोक्ष' में 'चित्त' की न चले,
चले प्रभु की नेक।। 11

प्रभु का ही अधिकार यह,
चित्त 'दृश्य' है मीत।
प्रभु 'द्रष्टा' हैं समर्थ,
'पुरुष' नाम से चीत।। 12

जब चाहे वह मोक्ष को,
रोक सकेगा कौन।
सद्गुरु उस के साथ हों,
देख रहें रह मौन।। 13

[1]'पुरुष' स्वतन्त्र है सदा,
वह न चित्त अधीन।
बात पते की यह मिले,
मिलें गुरु प्रवीन।। 14

---

1. सदा ज्ञाताश्चित्तवृत्तयस्तत्प्रभोः पुरुषस्यापरिणामित्वात्। (यो०द० IV. 18)
अर्थ : चित्त का स्वामी पुरुष परिणामी नहीं है। इसलिए चित्त की वृत्तियां उसे सदा ज्ञात हैं।

[1] चित्त तो एक दृश्य है,
न प्रकाशक मान।
इस कारण तुम चित्त न,
मोक्ष विधाता जान।। 15

और सुनो तुम साधु भाई,
मोक्ष के मग में जो कठिनाई।
सन्मुख एक समस्या आए,
बुद्धि जिस से रहत चकराए।
'दो दृश्य' बुद्धि सन्मुख आयें,
इक समय किमि दो दिख पायें।
[2] एक 'पदार्थ' इन में भाई,
दूजा 'चित्त' है वहां स्थायी।

---

1. न तत्स्वाभासं दृश्यत्वात्। (यो०द० IV. 19)
अर्थ : 'चित्त' स्वप्रकाशक नहीं है क्योंकि वह 'दृश्य' है।

2. एकसमये चोभयानवधारणम्। (यो०द० IV. 20)
अर्थ : और एक समय में दोनों (पदार्थ और चित्त) का ज्ञान नहीं हो सकता।

बुद्धि दो को किमि पहचाने,
वह तो एक को देखन माने।
[1] इस से 'बुद्धि-भेद' हो जाए,
स्मृति में भी भ्रांति आए।
[2] सन्मुख दृश्य यदि इक ही आय,
आकार उस में दृढ़ रह पाय।
बुद्धि में तब ज्ञान उपजाय,
मार्ग मोक्ष का सरल हो जाय।

---

1. चित्तान्तरदृश्ये बुद्धिबुद्धेरतिप्रसङ्गः स्मृतिसंकर श्च।
(यो०द० IV. 21)
अर्थ : यदि पहले चित्त को दूसरे चित्त का दृश्य माना जाए तो अनवस्था दोष होगा और स्मृतियों का संकर हो जाएगा।

2. चितेरप्रतिसंक्रमायास्तदाकारापत्तौ स्वबुद्धिसंवेदनम्।
(यो०द० IV. 22)
अर्थ : 'पुरुष' को परिणाम रहित स्वप्रतिबिम्बित चित्त के आकार की तरह आकार की जो प्राप्ति होती है उस से अपने विषयभूत का ज्ञान होता है।

'चित्त' भी मोक्ष का हेतु होय,
द्रष्टा का है साथी सोय।
[1]द्रष्टा को जो देख रहा,
और दृश्य भी साथ।
ऐसा चित्त कहलात,
मोक्ष हेतु सर्वार्थ।। 16

साधु यह उपदेश सुन पाया,
उस चित्त का स्वभाव लखाया।
प्रश्न उस ने तब यह कर पाया,
सद्गुरु है भ्रम मन उपजाया।
यह चित्त 'द्रष्टा' को भी देखे,
और पदार्थ को भी पेखे।
किस विध चित्त दो लक्ष्य लखाय,
'द्रष्टा' व 'दृश्य' संग दिख पाय।

---

1. द्रष्टृदृश्योपरक्तं चित्तं सर्वार्थम्। (यो०द० IV. 23)
अर्थ : द्रष्टा और दृश्य में रंगा हुआ चित्त सारे अर्थों वाला होता है।

एक काल हो एक ही ओर,
देखो किमि वह दूजी ठोर।
मम भ्रांति का करें निवारण,
मुक्ति मार्ग नहीं साधारण।
कहा स्वामी हे साध प्यारे,
जानो 'चित्त' के खेल न्यारे।
चित्त साधारण न तुम जानो,
वह तो एक समुद्र मानो।

[1] चित्त तो एक समुद्र है,
उस की है न थाह।

---

1. तदसंख्येयवासनाभिश्चित्रमपि परार्थं संहत्यकारित्वात्। (यो०द० IV. 24)
अर्थ : चित्त अनगिनत वासनाओं से चित्रित हुआ भी 'परार्थ' है क्योंकि वह 'संहत्यकारी' है (जो वस्तु कई चीज़ों से मिल कर काम की बनती है वह 'संहत्यकारी' कहलाती है; संहत्यकारी वस्तु अपने लिए नहीं होती बल्कि किसी दूसरे के लिए)। चित्त भी 'पुरुष' के 'भोग' 'अपवर्ग' के लिए ही है।

वासना का भंडार,
उस में जान अथाह।। 17

'संहत्यकारी' जान लो,
'पर-हित' उस का काम।
उस की सत्ता 'पुरुष' हित,
स्वार्थ से नहीं काम।। 18

एक बात हम और बतायें,
चित्त जनक मन का कथ पायें।
समुद्र से जिमि मेघ उपजाये,
चित्त से मन तिमि उपजाये।
[1] वेदन मन की शक्ति बखानी,
चित्त की भी है उसी से जानी।
ज्योतियों की मन ज्योति बखाना,
कर्म न उस बिन होता माना।

1. देखें यजुर्वेद अध्याय 34 मन्त्र (1-6)

तीनों काल मन के अधीन,
तीन वेद भी उस में चीन।
उसमें चित्त है पूर्ण समाया,
मन के अधीन सभी जन आया।
वह मन उपजा चित्त से जान,
महत्व इस से चित्त का मान।
[1] शक्तिशाली चित्त वह,
दो रूप का जान।
'विशेष दर्शी' एक है,
दूज 'अविशेषी' मान।। 19
सुनी नाथ से बात नवीन,
साध कहा हे नाथ प्रवीन।

---

1. विशेषदर्शिन आत्मभावभावनाविनि वृत्तिः।
(यो०द० IV. 25)
अर्थ : विवेक ख्याति द्वारा पुरुष और चित्त में भेद देखने वाले की आत्मभाव की भावना (मैं कौन हूँ, क्या हूँ इत्यादि) निवृत्त हो जाती है।

आप ने जो यह बात बताइ,
समझ मेरी में है न पाई।
कर कृपा इस को समझावें,
गुरु से ही शिष्य शिक्षा पावें।
नाथ कहा बहु काल विहाया,
संध्या वन्दन वेला आया।
प्रातः काल पुनः कथ पायें,
बात स्पष्ट तभी कर पायें।
ऐसा कथ नाथ उठ पाये,
अपने कक्ष में वे सिधाये।

दिन तीसरा (प्रातः)

भयी प्रातः साध चलि आया,
आ कर नाथ को शीश झुकाया।
नाथ कहा हे साध सुजान,
सागर अथाह चित्त तू जान।

अथाह गहराई इस की मान,
इस के रूप भी दो पहचान।

'विशेषदर्शी' रूप इक,
दूज 'अविशेषी' मान।
दोनों का प्रभाव अब,
मुझ से सुन सुजान।। 20

[1] 'विशेषी' चित्त विवेकी होय,
'कैवल्य' मार्ग में लागे सोय।
'अविशेषी' मायारत्त पहचान,
अनात्मतत्व में रहता जान।
साधो पर इक बात बताऊँ,
'विवेक मार्ग' न सरल मैं पाऊँ।

---

1. तदा विवेकनिम्नं कैवल्यप्राग्भारं चित्तम्।
(यो०द० IV. 26)
अर्थः 'विशेषदर्शन' के उदय होने पर 'विशेषदर्शी' चित्त विवेक मार्ग संचारी होकर 'कैवल्य' अभिमुख होता है।

'विवेक जीवन' में विघ्न अनेक,
क्षण क्षण आते वे प्रत्येक।
[1] इस का कारण भी है भाई,
विवेकी जीवन में जो कठिनाई।
सुन नाथ की बात वह साध,
कहन लगा किस कारण बाध।
वह कारण भी सुनना चाहूँ,
मैं तो मार्ग विवेक अपनाऊँ।
गुरु कृपा से विघ्न नशायें,
कृपा करें दूर हो जाएं।

गुरु कृपा से विघ्न सब,
नाथ होत हैं दूर।

---

1. तच्छिद्रेषु प्रत्ययान्तराणि संस्कारेभ्य:।(यो०द० IV. 27)
अर्थ : उस विशेष ज्ञान के बीच-2 में अन्य व्युत्थान की वृत्तियें (भी) (पूर्व के व्युत्थान के) संस्कारों से उदय होती रहती हैं।

मार्ग विवेक अपनाऊँ,
कृपा करें ज़रूर।। 21

कहन लगे उसे गुरु महाराज,
बात बताऊँ तुमको आज।
मग विवेक में विघ्न जो आयें,
निज संस्कार ही उन को लायें।
साधक जो प्रमादी होय,
संस्कारों से प्रभावी सोय।
प्रमाद शत्रु योग का भाई,
इस से रहना दूर सदा ही।
पतंजली इक उपाय बताया,
विघ्न निवारक गुर जतलाया।
साध कहा मम हे गुरुदेव,
आया हूँ मैं आपकी सेव।
वे उपाय भी मुझे बतायें,
जिस विध विघ्नों से बच पायें।

[1] कहा नाथ सुन हे मम मीत,
वह भी मुझ से लो तुम चीत।

'ध्यान' महान उपाय है,
विघ्न ध्यान से दूर।
विघ्न हो या क्लेश कोई,
करे जन ध्यान ज़रूर।। 22

'निरोध' सरल न चित्त का,
मग में विघ्न अनेक।
'ध्यान' द्वारा दूर हों,
है उपाय यह एक।। 23

---

1. हानमेषां क्लेशवदुक्तम्। (यो०द० IV. 28)
अर्थ: उन (उत्थानों के संस्कारों) की निवृत्ति क्लेशों की निवृत्ति (योग दर्शन-II. 2-11) के तुल्य कही गई जाननी चाहिए। क्लेशों की निवृत्ति के उपाय (योग दर्शन-II. 10-11) में निम्न प्रकार से कहे हैं: 'क्लेशों की स्थूल वृत्तियां जो क्रिया योग से सूक्ष्म कर दी गई हैं, वे 'ध्यान' द्वारा त्यागने योग्य हैं'।

[1]'विवेक मार्ग' जब जन लगे,
तब हो विघ्न न कोय।
'धर्म मेघ समाधि' से,
योगी पूर्ण होय।। 24

कहा साध हे सद्गुरु प्यारे,
सुने मैंने विचार तिहारे।
'धर्म मेघ' जो समाधि होय,
किमि 'कैवल्य' में सहायक सोय।
कहा नाथ यह स्पष्ट है बात,
कर्म क्लेश से तब मुक्ति तात।

---

1. प्रसंख्यानेऽप्यकुसीदस्य सर्वथा
विवेकख्यातेर्धर्ममेघः समाधिः। (यो०द० IV. 29)
अर्थः जो योगी 'प्रसंख्यान ज्ञान' से भी विरक्त है उन को निरंतर विवेकख्याति के उदय होने से 'धर्म मेघ समाधि' होती है।

[1]'कर्म' सभी 'अकर्म' हो जायें,
क्लेशों से जन छूट ही पायें।
'धर्म मेघ' का फल यही,
होता मेरे मीत।
सर्वश्रेष्ठ समाधि यह,
रहे सदा तव चीत।। 25

[2] और भी परिणाम है,
'धर्म मेघ' का मीत।
'मलावरण' का नाश हो,
होय सर्वज्ञ चीत।। 26

---

1. ततः क्लेशकर्मनिवृत्तिः। (यो०द० IV. 30)
अर्थः उस (धर्म मेघ समाधि) से क्लेश (अविद्या, अस्मिता, राग द्वेष और अभिनिवेश) और कर्मों (सकाम कर्म अर्थात् शुभ अशुभ और शुभाशुभ मिश्रित) की निवृत्ति होती है।
2. तदा सर्वावरणमलापेतस्य ज्ञानस्यानन्त्याज्ज्ञेयमल्पम्। (यो०द० IV. 31)
अर्थः तब सब क्लेश कर्मों के क्षय काल में सर्व आवरण रूप मलों से रहित होकर चित्त रूप प्रकाश के अनन्त होने से ज्ञेय-पदार्थ अल्प हो जाता है।

सर्व ज्ञाता चित्त जब,
ज्ञेय रहे न कोय।
तीन गुणों का खेल तब,
समाप्त ही वह होय।। 27

[1] समाप्त गुणों का खेल जब,
उपजे कुछ भी नाहिं।
[2,3] कैवल्य वह ही जानना,
चित्त स्वरूप समाहिं।। 28

---

1. ततः कृतार्थानां परिणामक्रमसमाप्तिर्गुणानाम्। (यो०द० IV. 32)
अर्थः तब कृतार्थ हुए गणों के परिणाम के क्रम के आरंभ की समाप्ति हो जाती है।
2. क्षणप्रतियोगी परिणामापरान्तनिर्ग्राह्यः क्रमः। (यो०द० IV. 33)
अर्थः प्रतिक्षण होने वाली परिणाम की समाप्ति पर जानी जाने वाली अवस्था विशेष का नाम 'क्रम' है।
3. पुरुषार्थशून्यानां गुणानां प्रति प्रसवः कैवल्यं स्वरूपप्रतिष्ठा वा चितिशक्तिरिति। (यो०द० IV. 34)
अर्थः पुरुषार्थ से शून्य हुए गुणों का अपने कारण में लीन हो जाना कैवल्य है अथवा चित्ति शक्ति का अपने स्वरूप में अवस्थित हो जाना कैवल्य है।

आत्मा में जब चित्त समाय,
जीव पुनः न देह में आय।
'कैवल्य' इसकी संज्ञा चीन,
पतंजली ने जो है लिख दीन।
इस को कहते चित्तावरोध,
कथा है 'योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः'।
(यो०द० I. 2)
प्रथम सूत्र में जो लिख पाया,
अन्तिम सूत्र में सिद्ध लिखाया।
श्रवण करी जब बात सब,
कृत कृत्य भया साध।
ज्ञान कैवल्य का मिला,
"धन्य गुरु" कहा साध॥ 29
कहा नाथ हे साध प्यारे,
और यदि कुछ प्रश्न तिहारे।

वे भी पूछ लेवो हे भाई,
परिप्रश्न से ज्ञान हो जाई।
कहा साध अब प्रश्न न कोई,
बड़ा कैवल्य से ज्ञान क्या होई।
मम जिज्ञासा भई है दूर,
दें आज्ञा अब मुझे हज़ूर।
कहा स्वामी "साध हे प्यारे,
मार्ग प्रशस्त होंय तिहारे।
प्रसन्नता पूर्वक तुम चलि जाओ,
सुख पूर्वक पहुंच तुम पाओ"।
ऐसा सुन साध कर प्रणाम,
प्रस्थान किया उस अपने धाम।
साध व नाथ का यह संवाद,
पढ़े सुनेगा जो निर्बाध।
मोक्ष ज्ञान उसे मिल पाये,
सन्मार्ग को वह अपनाये।

'विचार काण्ड परिशिष्ट' यह,
जो लिखवाया नाथ।
आज संपूर्ण है भया,
प्रभु आशिष के साथ।। 30

आशीर्वाद प्रभु की मिली,
दिये दर्श गुरुदेव।
कान पड़ी यही वाणी,
"स्वीकार तुम्हारी सेव"।। 31

'सेवक' भया कृतार्थ तब,
भूला अपना आप।
सन्मुख था इक दृश्य तब,
सद्गुरु का प्रताप।। 32

-इति-

आज शुक्रवार 18 मई ई०स० 2007 तदानुसार 3 ज्येष्ठ संवत् 2064 को योग दिव्य रामायण के विचार काण्ड का 'परिशिष्ट' सद्गुरु श्री 108 स्वामी मुलखराज के शिष्य 'सेवक' चमनलाल कपूर कृत सम्पूर्ण भया।

❖ योग साधन आश्रम के नियम ❖

(श्री योगेश्वर प्रभु राम लाल जी महाराज द्वारा रचित)

1. आश्रम में किसी प्रकार की फीस नहीं ली जाती।
2. पुरुषों को पुरुष और स्त्रियों को स्त्रियां साधन सिखलाती हैं।
3. आश्रम के विद्यार्थी तीन श्रेणियों में विभक्त किये जाते हैं : –
   (क) जो सर्वदा आश्रम में रहकर अपने साधन को करते हुए आश्रम की यथा योग्य परिचर्य्या और अन्य भाईयों की प्रेम पूर्वक सेवा करेंगे।
   (ख) जो साधक यथा अवकाश आश्रम में रहकर स्वयं साधन सीखकर अपने देश में जाकर दूसरों को भी अपने अनुभव से लाभ पहुंचाते हुए प्रचार करेंगे।
   (ग) जो आश्रम में आकर साधनों से लाभ उठाएंगे।
4. प्रत्येक साधक को अपने सब खर्च का प्रबन्ध आप करना होगा।
5. रोगी साधक को अपने रोग निवारणार्थ कम से कम एक मास रहने का प्रबन्ध करके आना चाहिये, किन्तु जो भगवद्भक्ति मानसिक शान्ति के लिये योग के अन्तरंग साधन करना चाहते हों

उनको श्री गुरु जी के ही विचार पर सदा निर्भर रहना होगा।

6. प्रत्येक साधक को अपनी दिनचर्य्या तथा रात्रिचर्य्या (टाईम टेबल) श्री गुरु जी की आज्ञानुसार नियत करनी होगी।

7. योग चिकित्सा से चिकित्सित होने वाले साधक को अपने चिकित्सा काल के अन्दर किसी भी डाक्टर वैद्य या हकीम की दवाई खाना निषिद्ध है।

8. यदि कोई साधक अन्य साधकों के किसी साधन को देखकर बिना अनुमति स्वयं उन साधनों को करेगा तो उस से लाभ हानि का जिम्मेवार वह स्वयं होगा और आश्रम के आचार्य के अनुशासनहीनता का भी भागी होगा।

9. २० वर्ष से कम आयु वाले को उसके संरक्षकों की सम्मति से प्रविष्ट किया जायेगा।

10. स्त्रियों को संबन्धियों के साथ आना चाहिये या वृद्ध स्त्री को जो संरक्षक हो उसी के साथ आना चाहिये।

11. साधकों को जो भी कोई उपासना या साधन दिया जावे उसे नित्य नियम पूर्वक करना होगा और आचार्य जी की आज्ञा के बिना अन्य कोई मनमानी नूतन उपासना या धारणा नहीं करनी होगी।

❖❖❖❖

राजयोग के आठ अंग

1. यम
2. नियम
3. आसन
4. प्राणायाम
5. प्रत्याहार
6. धारणा
7. ध्यान
8. समाधि

हठयोग के सात अंग

1. षट्कर्म
2. आसन
3. मुद्रा
4. प्राणायाम
5. प्रत्याहार
6. ध्यान
7. समाधि

1. योग के पांच यम

यम का अर्थ रोकने से है, इस के पांच भेद हैं -

अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह ।

1. **अहिंसा** – अहिंसा का अर्थ है किसी जीव को मन, वचन, कर्म से कष्ट न देना ।

2. **सत्य** – सत्य स्वरूप पर अटल विश्वास रखना, सत्य भाषण करना, सत्य आचरण करना । जहां मन, वाणी, कर्म भिन्न हैं वहां सत्य लुप्त है ।

3. **अस्तेय** – अस्तेय का अर्थ है अपहरण (चोरी) न करना अर्थात् जो वस्तु अपनी है उस पर ही सन्तोष करना । पराई वस्तु को मन, वचन, कर्म से भी ग्रहण न करना ।

4. **ब्रह्मचर्य** – ब्रह्मचर्य का अभिप्राय है वृत्तियों को ब्रह्माकार में स्थिर रखने का यत्न करना तथा मन, वचन, कर्म से विषय भोग से बचना । अपनी ध र्मपत्नी के अतिरिक्त छोटी को पुत्री, समान को बहिन और बड़ी को माता मानना ।

5. **अपरिग्रह** – अपरिग्रह का अर्थ है किसी के धन ऐश्वर्य की ओर वृत्ति को न जाने देना । जो प्राप्त है उसी पर सन्तुष्ट रहना ।

2. योग के पांच नियम

नियम का अर्थ है प्रतिज्ञा। जो कुछ श्री सद्गुरू देव जी का उपदेश हो, अथवा किसी के साथ विचारपूर्वक वचन किया हो उसका मन, वचन, कर्म से पालन करना। इसके भी पांच भेद हैं - शौच, सन्तोष, तप, स्वाध्याय, ईश्वर-प्रणिधान।

1. **शौच** : अर्थात पवित्रता मन, वचन, कर्म से।

2. **सन्तोष** : जो कुछ प्राप्त है उसी पर संतोष करना, किसी प्रकार भी वृत्ति को चलायमान न होने देना।

3. **तप** : अर्थात इन्द्रियों का दमन, अथवा भूख-प्यास, गर्मी-सर्दी को सहन करना और जीव मात्र के हित का विचार रखना।

4. **स्वाध्याय** : अर्थात आत्मस्वरुप में वृत्ति को स्थिर रखना तथा धर्म ग्रन्थों को पढ़ कर मनन में लाना।

5. **ईश्वर प्रणिधान** : अर्थात् ईश्वर में अटल विश्वास रखना।

❖ योग साधन आश्रम होशियारपुर के प्रकाशन ❖

1. श्री योग महादिव्य रामायण (ग्यारह खण्डों में)
2. नित्य कर्म (नैमित्तिक कर्म सहित)
3. योगी सद्गुरु महात्म्य
4. श्री योग दिव्य गाथा – श्री प्रभु राम कहानी
5. श्री योग दिव्य कुसुम
6. योग मार्ग
7. योग दिव्य कहानियां
8. योग दिव्य यात्राएं
9. यौगिक स्वदेश विनय पत्रिका
10. योग के आसन
11. योग सुमन
12. योग के आसन और प्राणायाम
13. योग के आसन और योग मुद्रायें
14. योग के आसन, जीवन तत्व और यौवन तत्व
15. योगेश्वर श्री 1008 प्रभु रामलाल जी महाराज का संक्षिप्त 'जीवन परिचय', योग पुष्पांजली सहित
16. श्री 1008 स्वामी मुलखराज जी महाराज का संक्षिप्त जीवन चरित्र, द्वादश मासा और श्री सद्गुरु स्तोत्र सहित
17. **The Yogic Shat Karma & The Yogic Cure of Colds**
18. **Yoga Divine Tales (Part 1 & Part 2)**
19. **Yog Asanas.**

20. **Complete Yoga at a Glance - Chart**
21. सम्पूर्ण योग साधन निरीक्षण - चार्ट
22. योग के आसन - चार्ट
23. योग निरीक्षण
24. योग दिव्य प्रवचन
25. योग के 84 आसन
26. योग मार्गदर्शक
27. चमन-चरित
28. चार पुष्प
29. गुरुमाता चरित
30. **Insight in Yoga**
31. **Meditation-made easy**
32. प्रवासी आत्मा
33. सतरह भूलें
34. बारह सुधार
35. **Hindus' Dilemma**
36. हिन्दू धर्म का इतिहास
37. वीर बावनी
38. शौर्य शतक
39. हिन्दू नारी का इतिहास (वीरांगना शतक)
40. हिन्दुत्व चेतना
41. कैवल्य विचार